P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-3* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

रामायण काल में संगीत

रवि जोशी
सहायक प्राध्यापक,
संगीत विभाग,
डी,एस,बी परिसर,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय,
नैनीताल उत्तराखंड

सारांश

वैदिक अरण्यक ब्राहमण, उपनिषद् आदि ग्रंथों एवं समय के पश्चात भारतीय सभ्यता, संस्कृति, सामजिक व्यवस्था आदि की दृष्टि से रामायण महाकाव्य का संसार में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

रामायण मात्र एक महाकाव्य होने तक सीमित नहीं है अपितु यह भारतीय जीवन दर्शन से सम्बन्ध रखने वाला आदर्श ग्रन्थ माना जाता है जिसमें हमें धर्म, नीति, आचार–विचार एवं तत्कालीन जीवन की सुन्दर झाँकी मिलती है।

महाकाव्य रामायण में हमें तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक जीवन के परिचय के साथ ही साथ समसामयिक संगीत से सम्बंधित बहुत जानकारी मिलती है। तत्कालीन समय में प्रचलित विविध गान विधाओं, वाद्यों इत्यादि की जानकारी हमें रामायण से प्राप्त होती है।

मुख्य शब्द : रामायण, वाल्मीकि, त्रेतायुग, गान्धर्व गान, वीणा, ग्राम, मूच्छर्ना, ताल, अवनद्ध वाद्य, सुषिर वाद्य

प्रस्तावना

रामायण हमारी भारतीय संस्कृति का एक ऐसा महाकाव्य है जिससे सभी लोग भली भाँति परिचित है। रामायण के रचियता महर्षि वाल्मीकि थे। अपने देश की परंपरा के अनुसार वाल्मीकि भगवान राम के समकालीन थे। रामायण की घटनाएँ वह व्यक्तिगत रुप से जानते थे। उन्होनें किसी प्राचीन कथा के आधार पर रामायण का प्रणयन नहीं किया रामायण की सारी कथा उनकी मौलिक रचना है। सभी विद्वान इस बात से सहमत है कि प्रथम महाकाव्य रामायण के रचियता महर्षि वाल्मीकि ही थे।

वाल्मीकि आदि कवि के रुप में स्मरण किये जाते है। उनका गोत्र "भृगु" था इसलिये वह "भार्गव" भी कहे जाते है तथा "प्रचेतस" के वंश में होने के कारण उन्हे "प्रचेतस" भी कहा जाता है। श्री राम के समय से ही उनका आश्रम गंगा नदी के तट पर स्थित था। श्री राम के द्वारा निष्कासित करने के पश्चात सीता जी आकर इन्हीं के आश्रम में रहीं और वहीं पर उनके पुत्र लव–कुश का जन्म हुआ। महर्षि वाल्मीकि ने रामायण की रचना करके उसे लव और कुश को कंठस्थ कराया जिन्होनें इसका गान कर चारों ओर सुनाया और ख्याति प्राप्त की।

यह महाकाव्य साहित्य के सभी रसों का आस्वादन कराता है। काव्य की दृष्टि से यह एक सर्वोच्च कोटि का काव्य माना जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य, रामायण कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक जीवन का परिचय देने के साथ– साथ तत्कालीन समाज में संगीत कला की स्थिति कितनी उन्नत अवस्था में थी इस तथ्य से पाठकों का परिचय करवाना है। प्रस्तुत शोध पत्र में रामायण काल में प्रचलित विविध गान विधाओं, वाद्यों विविध अवसरों पर संगीत कला के महत्व की जानकारी प्रदान कर भारतवर्ष के स्वर्णिम सांस्कृतिक इतिहास की एक झलक प्रस्तुत करने का लघु प्रयास किया जा रहा है

साहित्य जगत के साथ–साथ संगीत जगत में भी रामायण को विशेष स्थान प्राप्त है क्योकिं पाठ्य होने के साथ–साथ यह छंदोबद्ध तथा गेय भी है। इसका प्रस्तुतिकरण पठन और गायन दोनो प्रकार से होने के कारण पूरे भारत में ही नहीं अपितु समस्त विश्व में यह अपना एक विशेष स्थान रखता है। यह महाकाव्य भक्ति, ज्ञान, राजनीति, आदर्शवाद का एक अनूठा उदाहरण है जिसका प्रचार प्रसार जन–जन तक हो चुका है।

धनी–निर्धन, बाल–वृद्ध, शिक्षित अशिक्षित सभी वर्गों के लोग इसे समझ सकते है, और अपने जीवन में दिनचर्या में इसका अनुभव कर सकते है। जीवन

के हर पहलू, हर संदर्भ में यह काव्य किसी न किसी रुप में प्रकाश डालता है। जो रामायण और महाभारत को नहीं जानता वह भारत की संस्कृति को कभी नही समझ सकता। रामायण से हमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम जैसे आदर्श चरित्र को निकट से जानने का अवसर प्राप्त होता है। भगवान राम की प्रसिद्धि इसी बात से सिद्ध होती है कि अनादि काल से उनके नाम पर असंखय मंदिरों का निर्माण हुआ अनेकों काव्य, नाटकों का प्रणयन हुआ, अनेको प्रबंध ध्रुपद भजन कीर्तन इत्यादि बनाये गये। भारत ही नहीं अपितु सुमात्रा, जावा ,बालि इत्यादि देशों में भी भगवान राम के मंदिर है तथा उनके नृत्यों नाटकों तथा गान आदि में आज भी भगवान राम एवं रामायण का प्रभाव परिलक्षित होता है। यही कारण है कि ब्रह्मा ने रामायण के विषय में जो भविष्यवाणी कही थी वह अक्षरशः सत्य निकली –

"यावत स्थास्यन्ति गिरियः सरितश्च महीतले ।
तावत रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति"।।

अर्थात– जब तक इस भूतल पर नदी और पर्वत रहेंगें। तब तक रामायण– कथा का लोक में प्रचार होता रहेगा।

रामायण में लगभग २४००० श्लोक है विद्वानों का मत है कि द्वितीय से षष्ठ काण्ड तक का निर्माण पूर्व में हो चुका था। प्रथम और सप्तम काण्ड बाद में जोड़ें गये। द्वितीय से षष्ठ काण्ड तक भगवान राम एक महावीर के रूप में चित्रित किये गये हैं। सप्तम काण्ड में वह विष्णु के अवतार के रुप में प्रदर्शित किये गये है। अतः सप्तम काण्ड संम्भवतः बाद में जोडा गया है। विद्वानों का मत है कि यदि सप्तम काण्ड बाद में जोडा गया है तो वह किसी और कवि की कृति भी हो सकती है।

रामायण का रचनाकाल रू भारतीय परंपरा के अनुसार रामायण की रचना त्रेता युग में हुई। इसके अनुसार रामायण का काल ईसा से सहस्त्रों वर्ष पूर्व है। यूरोपीय विद्वानों के अनुसार रामायण की रचना ईसा से लगभग ६००–३०० वर्ष पूर्व हो चुकी थी। जो कुछ भी बाद में जोड़ा गया, वह ईस्वी शती २०० तक सम्पूर्ण हो चुका था।

कुछ यूरोपीय विद्वानों का मत है था कि रामायण यूनान के कवि होमर से प्रभावित हुई थी, किन्तु अब सभी यूरोपीय विद्वान इस बात से सहमत है कि यवन या यूनान का रामायण पर कोई प्रभाव नहीं है । इसको भी सभी विद्वान मानते है कि यह बुद्ध से पूर्व बन चुकी थी।

रामायण में सांगीतिक विषयों का उल्लेख

रामायण में जिन सांगीतिक विषयों का उल्लेख आया है उससे यह पता चलता है कि उस काल में हमारे संगीत की क्या स्थिति थी। यदि हम यूरोपीय विद्वानों द्वारा निर्धारित ईसा से ४००–३०० वर्ष पूर्व ही रामायण का काल मान लें तो भी रामायण में जिन सांगीतिक विषयों की चर्चा हुई है, उनसे यह पता चलता है कि आज से लगभग २४०० वर्ष पूर्व हमारे संगीत ने कितनी उन्नति कर ली थी।

सर्वप्रथम यदि हम संगीत शब्द को लें तो संगीत शब्द किषिकन्धाकाण्ड के २८ वे सर्ग के श्लोक ३६ और ३७ में आया है। श्री रामचन्द्र किषिकन्धावन का वर्णन करते हुए लक्षमण से कहते है–

" हे लक्षमण ! देखो भ्रमरों का गुंजार वीणा के मधुर स्वर जैसा है। मेंढक मानो अपने कंठ से ताल के "बोल" बोल रहे है। मेघ का गर्जन मृदंग के नाद जैसा सुनाई दे रहा है। और भी देखो! ये मयूर संगीत का कैसा दृश्य उपस्थित कर रहे है। इन लम्बी लम्बी चोटियों वाले मयूरों में से कुछ तो नाच रहे है, कुछ गा रहे है तथा कुछ वृक्षों के अग्रभाग में बैठे हुए इस नृत्य और गान का आनंद ले रहे है लगता है वन में संगीत चल रहा है"।

रामायण काल में वाद्य, गान, और नृत्य तीनो के समूह के लिये संगीत शब्द का प्रयोग हुआ है। रामायण में गीत शब्द का प्रयोग भी अनेकों बार किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि रामायण काल तक संगीत शब्द का व्यापक अर्थ में प्रयोग होने लगा था।

अभिजात संगीत और संगीतशास्त्र के लिये उस समय "गान्धर्व" शब्द का प्रयोग होता था।

"गान्धर्वे च भुवि श्रेष्ठो बभूव भरताग्रजः ।
कल्याणाभिजनः सादुरदीनात्मा महामतिः"।।

अर्थात– भरत से ज्येष्ठ राम संसारभर में गान्धर्व में श्रेष्ठ, अतिशय, कल्याणविशिष्ट, सज्जन, क्षोभ के कारण उपस्थित होने पर भी अक्षुब्ध रहने वाले और महामति थे। गीत शब्द का प्रयोग भी कई स्थानों पर आया है । उदहारण के लिये बालकाण्ड के चौथे सर्ग का २७ वाँ श्लोक इस प्रकार गीत को व्यक्त करता है–

"परं कविनामाधारं समाप्तं च यथाक्रमं ।
अभिगीतमिदं गीतं सर्वगीतेषु कोविदैः"।।

अर्थात– वाल्मीकि द्वारा रचा हुआ यह काव्य सब कवियों का आश्रय है। यथाक्रम इसकी समाप्ति हुई है। सर्व प्रकार के ज्ञान में निपुण कुश और लव से तुम लोगों ने इस गीत को भलीं प्रकार से सुना।

बालकाण्ड के चौथे सर्ग के आठवें श्लोक में संगीत के बहुत से शब्द आये है जो यह बतलाते है कि उस समय हमारा संगीत कितनी उन्न्त दशा में था श्लोक इस प्रकार है–

"पाठ्ये गेये च मधुरं प्रमाणोंस्त्रिभिरन्वितम ।
जातिभिः सप्तभिर्युक्तं तन्त्रीलयसमन्वितं ।८।
रसैः श्रृंगारकरुणहास्यरौद्रभयानकैः ।
वीरादिभी रसैर्युक्तं काव्यमेतदगायताम् ।९।

अर्थात– कुश और लव के द्वारा रामायण काव्य का गायन किया गया। वह पाठ्य और गेय दोनो में मधुर था, तीनों प्रमाणों और सात जातियों से युक्त था, वीणा और लय के साथ उसका गान उन दोनो राजपुत्रों ने किया। वह काव्य श्रृंगार, करुण, हास्य, रौद्र, भयानक, वीर इत्यादि रसों से युक्त था।

बालकाण्ड के उपरोक्त श्लोक में तीसरा शब्द "प्रमाण" आया है। यह बतलाया गया है कि तीन प्रमाण से युक्त रामायण काव्य का गायन लव कुश द्वारा किया गया। इस संदर्भ में "प्रमाण" का अर्थ "लय" है। तीन प्रमाण अर्थात् तीन– द्रुत, मध्य, विलम्बित–लयों में उन बालकों ने रामायण काव्य का गायन किया।

चौथा महत्वपूर्ण शब्द उपर्युक्त श्लोक में "सप्तजाति" है। "सप्तभिर्जातिभिर्युक्तं" अर्थात् सात जातियों

से युक्त रामायण का गायन लव एवं द्वारा किया गया। यहाँ देखने वाली बात है कि जातियों से पहले सप्त की संख्या लगी है। सात शुद्ध जातियाँ थीं। आगे चलकर ११ और विकृत जातियों का विकास हुआ। रामायण में केवल सात की ही संख्या दी है। इससे लगता है कि उस काल तक केवल शुद्ध जातियों की ही निष्पत्ति हुई थी।

शुद्ध जातियाँ वे हैं जो सम्पूर्ण होती है अर्थात जिनमें सातों स्वर लगते है। कोई स्वर कम नहीं लगाया जाता। लव और कुश द्वारा इन सप्त जातियों में रामायण का गायन किया गया।

"तन्त्री" का अर्थ तन्त्रीयुक्त वीणा है। लव एवं कुश रामायण को वीणा के साथ गाते थे। वीणा और गान सब एक लय में चलता था। "प्रमाण" और "तन्त्रीलयसमन्वित" शब्द उत्तरकाण्ड के ६४ वें सर्ग के तीसरे श्लोक में भी मिलता है। बालकाण्ड के चौथे सर्ग में ही १०वें श्लोक में कुश और लव के विषय में यह भी कहा गया है –

"तौ तु गान्धर्वतत्वज्ञौ स्थानमूच्छ्नकोविदौ ।
भ्रातरौ स्वरसम्पन्नौ गान्धर्वाविव रूपिणौ "।।

अर्थात– वे बालक गान्धर्व के तत्व को जानते थे, स्थान और मूर्चछना को जानते थे, मधुर स्वर से सम्पन्न थे और गन्धर्व के समान रुपवान थे।

कुश और लव के विषय में "स्थानमूच्छ्नकोविदौ" भी कहा गया है। वे "स्थान" एवं "मूर्चछना " के जानकार थे। स्थान शब्द सुन्दरकाण्ड के चौथे सर्ग के १०वें श्लोक में भी आया है। स्थान शब्द मन्द्र, मध्य, एवं तार स्वरों के लिये प्रयुक्त हुआ है यह तीनो वैदिक काल में ही नियत हो चुके थे। कवि का तात्पर्य यही है कि दोनों बालक सरलता के साथ मन्द्र, मध्य और तार तीनों सप्तकों में अपने गायन का विस्तार करते थे। तथा वे दोनों बालक "मूर्चछना " तत्व को भी भली–भाँति जनते थे।

वैदिक काल में शास्त्रबद्ध संगीत को "गान्धर्व" कहते थे। इसी संगीत के लिये आगे चलकर मार्ग–संगीत का प्रयोग हुआ। रामायण काल में मार्ग संगीत को बहुत उच्च स्थान प्राप्त था। बालकाण्ड के चौथे सर्ग का ३६ वाँ श्लोक इस प्रकार है–

"ततस्तु तौ रामवचः प्रचोदितावगायातां मार्गविधानसंपदा ।
स चापि रामः परिषद्गतः शनैर्बुभूषयासक्तमना वभूव" ।।

बालकाण्ड के प्रारंभ में महर्षि वाल्मीकि ने सारे रामायण का सारांश भूमिका के रूप में दे दिया है। उसी चौथे सर्ग में उन्होनें यह बतलाया है कि किस प्रकार अंत में श्री रामचंद्र ने अपने पुत्रों के मुख से अपना चरित सुना। इसी संबंध में कवि ने कहा है– "तब उन दोनों बालकों ने राम के कहने से मार्गीय संगीत के नियमानुकूल (रामचरित) का गायन किया। सभा में बैठे हुए राम अपने चरित की चिरन्तन स्थिति की इच्छा से उस गान की ओर आकृष्ट हुये"।

रामायण काल में लय एवं ताल

रामायण काल में स्वर और जाति का प्रयोग तो उन्नत दशा में थे ही। लय और ताल का ज्ञान भी उन्नत अवस्था को प्राप्त था। ताल संबंधी बहुत से पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग रामायण में हुआ है। पूर्व में वर्णित "प्रमाण" शब्द का प्रयोग "लय" के अर्थ में हुआ है । "प्रमाण" और "मान" संगीतशास्त्र में ताल के अर्थ मे भी आया है। लय शब्द बालकाण्ड के द्वितीय सर्ग के १८ वें श्लोक में तथा "तन्त्रीलयसमन्वितः" उत्तरकाण्ड के ७१ वें सर्ग के १५ वें श्लोक में यथा "तन्त्रीलयसमायुक्तं" उत्तरकाण्ड के ६४ वें सर्ग के तीसरे श्लोक में यथा "तन्त्रीलयसमन्विताम्" में प्रयुक्त हुआ है।

टीकाकारों ने "लय" का अर्थ कहीं–कहीं मृदंग, वेणु, तन्त्री, गान का "एक साथ मिल जाना" और कहीं–कहीं द्रुत, मध्य, विलम्बित वृत्ति लिया है। आजकल द्रुत, मध्य, विलम्बित वृत्ति के अर्थ में ही "लय" शब्द व्यवहरत् होता है।

ताल शब्द भी उसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है जिसमे वह आजकल प्रयुक्त होता है। अर्थात हाथ अथवा अवनद्ध वाद्य अथवा घन वाद्य द्वारा गीत, वाद्य, नृत्य के मात्रा विभाग इत्यादि को व्यक्त करना। उत्तरकाण्ड के ७१ वें सर्ग के १५ वें श्लोक में "समतालसमन्वितम्" प्रयोग हुआ है परन्तु यहाँ सम से अर्थ– जिस मात्रा पर गान और ताल के प्रारंभ का एकीकरण होता है इसी अर्थ में लिया जाए अथवा नहीं? इसका उत्तर टीकाकारों ने "गानोचिततालशब्देन" दिया है जिसका अर्थ उपरोक्त कथन से भिन्न नहीं है।

उत्तरकाण्ड के ६४ वें सर्ग के ७ वें श्लोक में कला और मात्रा का उल्लेख भी आया है यथा–

कलामात्राविशेषज्ञान् ज्योतिषे चौ परंगतान् ।
क्रियाकल्पविदिश्चौव तथा कार्यविशारदान" ।।

अर्थात– कला और मात्रा के विशेषज्ञों को, ज्योतिष में पारांगत विद्वानों को बड़े–बड़े कर्मकाण्डियों को और आवाप, निष्क्राम आदि क्रियाओं के विशेषज्ञों को (राम ने आमंत्रित किया) संदर्भ यह है कि भगवान राम अश्वमेघ यज्ञ करने जा रहे हैं अतः सभी क्षेत्रों के पारांगत विद्वानों को बुलवाया गया है। साथ ही साथ उन्होनें गान्धर्वतत्व को जानने वाले स्वर, लय, गीत, कला और मात्रा के विशेषज्ञों को भी बुलवाया ताकि यज्ञ के अवसर पर जब लव और कुश जब रामायण का गान करें तो वे देखें कि दोनो बालको को शुद्ध संगीत का ज्ञान कहाँ तक प्राप्त है।

इसी संदर्भ में "कला" और "मात्रा" का उल्लेख हुआ है। प्राचीन काल में पाँच ह्रस्व अक्षरों का उच्चारण काल "लघु" अथवा "मात्रा" कहलाता था। यही गुरु या मात्रा ताल की इकाई था। दो गुरु के मिलने से एक लघु होता था।

"कला" शब्द प्राचीन संगीत में तीन अर्थों में प्रयुक्त हुआ है यथा– गुरु, ताल भाग तथा निशब्द अथवा सशब्द क्रिया हेतु। ताल के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण शब्द "शम्या" प्रयुक्त हुआ है। इसका उल्लेख अयोध्याकाण्ड के ६१ वें सर्ग के ४६ वें श्लोक में हुआ है प्रसंग है जब भरत भगवान राम की खोज में अपनी सेना के साथ भारद्वाज मुनि के आश्रम में पहुचतें है तो भारद्वाज किस प्रकार अपने तपोबल से पूरी सेना को अप्रतिम आतिथ्य प्रदान करते है–

"बिल्वा मार्दडिगका आसन् शम्याग्राहा विभीतिकाः।
अश्वत्था नर्तकाश्चासन् भारद्वाजस्य तेजसा।।

अर्थात– "भारद्वाज की तपस्या के प्रभाव से बेल के वृक्ष मृदंग बजाने लग गये, बहेड़ा के वृक्ष शम्या ताल देने लगे और पीपल के वृक्ष नाचने लग गये"।

प्राचीन संगीत में ताल को हाथ से प्रदर्शन करने को "क्रिया" कहते थे। यह दो प्रकार से होती थी निःशब्दा (बिना आवाज के) और सशब्दा (आवाज सहित) प्रत्येक के चार उपप्रकर थे। "शम्या" एक सशब्दा क्रिया थी। उपरोक्त श्लोक में शम्या शब्द प्रतीकात्मक है जिसका अर्थ है कि वह वृक्ष ताल प्रदर्शन की सभी क्रिया करता था।

आम जन–जीवन में संगीत– रामायण काल में आम जन जीवन पर भी संगीत की अमिट छाप थी, संगीत का प्रभाव न केवल मानवों पर अपितु पशुओं पर भी था। हिरणों को संगीत से लुभाकर पाश्बद्ध किया जाता था। राजा–प्रजा, नर–नारी, आर्य–वानर तथा राक्षस सभी वर्गों में संगीत कला का आस्वादन लिया जाता था। रामायण कालीन जन–जीवन में संगीत का व्यापक उपयोग होता था। प्रातः जगाने के लिये, आरधना के लिये, उत्सव के समय, युद्ध में वीरों को उत्साहित करने के लिये विभिन्न अवसरों पर संगीत का प्रयोग होता था।

संगीत का व्यवसाय करने वालों में गायक, सूत, मागध, बंदी तथा वीरांगनाओं का समावेश था। सामान्य जनता को प्रसन्न करने वाला इनका संगीत देशी संगीत रहा होगा इसमे कोई सन्देह नहीं। रामायण कालीन नगरों में इन कलाकारों का महत्वपूर्ण स्थान था। इन गायक वर्गों को राजसभा में वेतन पर नियुक्त किया जाता था। राजा कलाकारों का आश्रयदाता हुआ करता था तथा उन्हें प्रसन्न रखना अपना कर्तव्य समझता था। अयोध्याकाण्ड के ६७ वें सर्ग के १५ वें श्लोक में कहा गया है दृ

" नाराजके जनपदे प्रह्रष्टनटनर्तकः।
उत्सवाश्च समाजश्च वर्धन्ते राष्ट्रवर्धनाः"।।

अर्थात– जिस देश में राजा नहीं है वहाँ के नट नर्तक कभी प्रसन्न नहीं रहते और राष्ट्र को उन्नत करने वाले उत्सव और समाज वहाँ बढ़ नहीं सकते। रामायण काल में राजा और प्रजा के मनोरंजन के लिये नृत्यशालाएँ और संगीतशालाएँ पर्याप्त रुप में थीं। अयोध्या के अतिरिक्त सुग्रीव की किषिकन्धा और रावण की लंका नगरी में भी इन कलाकारों का संघ विद्यमान था।

राम के वनवास के पश्चात जब भरत अयोध्या के निकट पहुचते है तो देखते है कि जो अयोध्या नगरी सदा स्वरों से गूँजती रहती थी वहाँ किसी वाद्य की ध्वनी नहीं आ रही तो उनके मन में तुरन्त यह शंका उठती है कि कोई अमंगल अवश्य हुआ है। दुःस्वप्नों से व्यग्र भरत का गायन, वादन, नृत्य नाटक आदि से मनोरंजन करने का प्रयत्न किया गया था।

स्वागत एवं विदाई जैसे समारोहों में भी संगीत का आवश्यक स्थान था। राजा दशरथ की शवयात्रा में सूत आदि के द्वारा स्तुतिगान किये जाने का उल्लेख रामायण में मिलता है।

रामचन्द्र के वनवास से लौटने पर कुशल संगीतकारों ने शंख और दुन्दुभियों से उनका स्वागत किया था तथा रावण की मृत्यु के पश्चात उसकी अन्त्येष्टि में विविध तूर्यों के निर्घोष के साथ स्तुतिगान का उल्लेख भी रामायण में मिलता है।

रामायण काल में राजा लोग कलाकारों को प्रचुर धन भी देते थे। आगंतुक कलाकारों के स्वागत में कलागोष्ठी का आयोजन रसिक श्रोताओं के मध्य किया जाता था तथा उन्हें यथायोग्य पारितोषिक देकर सम्मानित किया जाता था।

उदहारण स्वरूप श्री राम द्वारा अश्वमेघ यज्ञ किये जाने के अवसर पर लव और कुश के गायन से वे इतने अधिक प्रसन्न हुए कि उन्होने भरत से कहा कि इन दो महात्माओं को १८००० स्वर्णमुद्राएँ प्रदान करो।

इस प्रकार रामायण में संगीत सम्बन्धी अनेकों उद्धरण मिलते है जिससे विदित होता है कि तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में संगीत का स्थान बहुत महत्वपूर्ण था।

रामायण में वर्णित वाद्य

प्राचीन संगीत में सभी प्रकार के वाद्यों के लिये सामान्य संज्ञा "अतोद्य" थी। रामायण काल में इन वाद्यों को बजाने वालों का साधारण नाम "तूर्य" था। रामायण काल में प्रयुक्त कुछ वाद्यों का विवरण इस प्रकार है –

वीणा रू रामायण काल में वैदिक काल की भाँति वीणा का प्रचुर प्रचार था। वीणा का रामायण के अयोध्याकाण्ड के ३९ वें सर्ग के ३६ वें श्लोक में, सुंदरकाण्ड के १० वें सर्ग के ३७ वें और ४० वें श्लोक में उल्लेख हुआ है। केवल वीणा ही नहीं वीणा के एक विशेष प्रकार "विपंची" का उल्लेख भी सुंदरकाण्ड के वें सर्ग के वें श्लोक में पाया जाता है। विपंची वीणा की संगति में नर्तकियाँ नृत्य किया करती थीं, ऐसा वाल्मीकि के निम्न वचन से स्पष्ट है–

"विपंची परिगृहान्या नियता नृत्यशालिनी "

वेणु, वंश, शंख

वेणु वाद्य वीणा के समान वैदिक काल में भी प्रचलित था। रामायण काल तक आते आते संभवतः इसकी बनावट में कुछ और प्रगति हुई हो। संभवतः रामायण काल में वेणु के नाना प्रकार अस्तित्व में आ गये थे सुंदरकाण्ड में "वंश" शब्द भी आया है जो कि वेणु का ही पर्याय है। शंख भी एक फूँक का वाद्य है जिसका उल्लेख युद्धकाण्ड के ४६ वें सर्ग के ३९ वें श्लोक में आया है।

दुन्दुभि

अवनद्ध वाद्य के अनेक प्रकारों का उल्लेख रामायण में आया है। दुन्दुभी भी एक प्राचीन वाद्य है। यह वैदिक काल में भी प्रचार में था। यह संग्राम के समय उत्तेजना के लिये, जयघोष के लिये, मंगल कार्यों के समय राजप्रसादों और मंदिरों में प्रातः एवं सायं बजाया जाता था। इसमें दो नग होते थे एक बड़ा और एक छोटा। छोटा नग धातु का बना होता था, चमड़े से मढ़ा हुआ और चमड़े की डोरियों से कसा होता था। बड़ा नगाड़ा स्थूल चमड़े से मढ़ा हुआ होता था।

भेरी, मृदंग पणव

युद्धकाण्ड के ४४ वें सर्ग के १२ वें श्लोक में भेरी मृदंग और पणव तीनों एक साथ प्रयुक्त हुए है। यथा –

"ततो भेरीमृदंगानां पणवानां व निःस्वनः ।
शंखनेमिस्वनोन्मिश्रः संबभूवाद् भुतोपमः"।।

भेरी, मृदंग और पणव वाद्यों का भी दुन्दुभि के समान रण में योद्दाओं के उत्साह वर्धन के लिये प्रचुर प्रयोग होता था। भेरी मृदंग की ही जाति का वाद्य है यह धातु की बनी होती है। भेरी दो मुख वाली होती है। यह मुख चमड़े से मढ़े हुये होते है तथा डोरियों से कसे रहते है जिनमें काँसे के कड़े पड़े रहते है। दाहिने मुख को लकड़ी से तथा बायें मुख को हाथ से बजाते थे ।

पणव वाद्य भी देवपूजा और युद्ध के समय बजाया जाता था। यह भी मृदंग जाति का वाद्य था । पणव के भी दो मुख होते थे जो की चमड़े से मढ़े जाते थे। पणव के दोनों मुख हाथ से बजाते थे। मृदंग और पणव को साथ–साथ बजाने से बहुत ही उत्साहवर्धक और रंजक स्वरघोष होता था।

पटह

यह भी बहुत प्राचीन वाद्य है। इसका उल्लेख सुंदरकाण्ड के १० वें सर्ग के ३६ वें श्लोक में हुआ है।

"पटहं चारुसर्वांगी न्यस्य शेते शुभस्तनी ।
चिरस्य रमणं लब्ध्वा परिष्वज्येव कामिनी"।।

अर्थात– सर्वांग सुंदरी शुभस्तनी एक महिला पटह को लेकर इस प्रकार सोई हुयी थी मानों बहुत समय बीत जाने पर मिले हुए पति का आलिंगन कर कोई कामिनी सो रही थी। यह ढोल से मिलता जुलता वाद्य है तथा इसका उल्लेख गीता में भी मिलता है।

डिण्डिम, आडम्बर, मड्डुक

सुंदरकाण्ड में कहा गया है कि इस वाद्य से प्रेम रखने वाली कोई स्त्री उसको लेकर इस प्रकार सोई हुई थी जैसे कोई स्त्री अपने जवान बच्चे को लेकर सोई हो। यह वाद्य डमरू के आकार का होता था।

आडम्बर वाद्य के लिये सुंदरकाण्ड में कहा गया है कि कोई स्त्री आडम्बर को दोनो भुजाओं से दबा कर सोई थी। वह कमलपत्र जैसी आँखोंवाली मदिरा के नशे में चूर थी। आडम्बर बहुत ही प्राचीन अवन्द्ध वाद्य है तथा इसका उल्लेख ऋग्वेद में भी आता है।

सुंदरकाण्ड में मड्डुक वाद्य का उल्लेख इस प्रकार आया है कोई काली आँखों वाली स्त्री बगल में मड्डुक लेकर सो गयी थी। ऐसा जान पड़ता था कि कोई बच्चे से प्यार करने वाली माता अपने नन्हें से पुत्र को लेकर सो गयी हो। मड्डुक का वर्णन किसी संगीत ग्रंथ में नहीं मिलता संभवतः यह एक छोटे प्रकार का हुडुकक था।

मुरज, मृदंग चेलिका

सुंदरकाण्ड के ११ वें सर्ग के छ्ठें श्लोक में तीनों अवनद्ध वाद्यों का एक साथ उल्लेख हुआ है–

"मुरजेषु मृदंगेषु चेलिकाषु च संस्थितः।
तथाऽऽस्तरणमुख्येषु संविष्टाश्चापरः"।।

अर्थात– कुछ स्त्रियाँ मुरज, मृदंग और चेलिका पर ही पड़ गयी थीं और कुछ विशिष्ट बिछौने पर सोई हुई थी।

मृदंग का रामायण में अनेकों स्थानों पर उल्लेख हुआ है। यह वाद्य अभी तक प्रचार में है एवं सभी लोग इससे परिचित है। मुरज, मृदंग अथवा मर्दल जाति का वाद्य है। चेलिका भी एक प्रकार का अवनद्ध वाद्य था किन्तु इसका आकार इत्यादि क्या था इसका पता किसी भी संगीतग्रंथ से नहीं चलता।

कोण

युद्धकाण्ड में कोण का उल्लेख हुआ है " युद्ध के लिये रावण की आज्ञा पाकर राक्षसों ने भयानक गर्जन किया। अनन्तर चन्द्र के समान कुछ श्वेत और पीले रंग के मुख वाली राक्षसों की भेरियाँ सोने के डण्डे से आहत होकर बजने लगीं।" कोण का अर्थ है बजाने का डण्डा या उपकरण इसका वीणा अथवा अवनद्ध वाद्यों के बजाने के साधन के अर्थ में प्रयोग होता था। रावण– भेरी का मुख सुनहला था और उसके बजाने का डण्डा (कोण) सोने का था।

निष्कर्ष

इस प्रकार कहा जा सकता है कि रामायण काल में संगीत एक बहुत विकसित अवस्था को प्राप्त हो चुका था। इस काल में गायन, वादन, एवं नृत्य तीनों अपने उच्चत्तम शिखर पर आसीन थे तथा तीनों के लिये संगीत शब्द का प्रयोग होता था। संगीत समाज का एक अभिन्न अंग था। इस काल में संगीत का प्रचार–प्रसार उच्च वर्ग से लेकर निम्न वर्ग तक सभी में था। राजा एवं राज्य के साथ संगीत का घनिष्ठ संबंध होता था। राजा प्रायरू गीत संगीत से ही सोते और जगते थे। संगीतजीवी वर्ग का इस काल में काफी प्रचार हो चुका था। संगीत के शास्त्र पक्ष यथा लय ताल, वाद्य, नृत्य, जाति तथा मूच्छर्ना आदि का वर्णन इस काल में मुक्त रुप से हुआ है।

निःसंदेह जिस युग में मर्यादापुरुषोत्म भगवान श्री राम ने जन्म लिया वह युग बड़ा ही पावन, पवित्र एवं धर्मपरायण रहा होगा। संगीत धर्म एवं संस्कृति के साथ साथ धनधान्य एवं खुशहाली का प्रतीक होता है। अतः रामायण काल में संगीत का सम्मानजनक एवं उच्चत्तम स्थान पर होना अपेक्षित ही है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *परांजपे श्रीधर शरचन्द्र – भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्भा विद्याभवन वाराणसी*
2. *परांजपे श्रीधर शरचन्द्र – संगीत बोध, मध्यप्रदेश हिंदी अकादमी भोपाल*
3. *देवांगन तुलसीराम – भारतीय संगीत शास्त्र मध्यप्रदेश हिंदी अकादमी*
4. *निबंध संगीत – संगीत कार्यालय हाथरस*
5. *जयदेव सिंह ठाकुर – भारतीय संगीत का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी*
6. *जोशी उमेश – भारतीय संगीत का इतिहास, मानसरोवर प्रकाशन प्रतिष्ठान आगरा*
7. *सेन अरुण कुमार – भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी*